सुखी काका

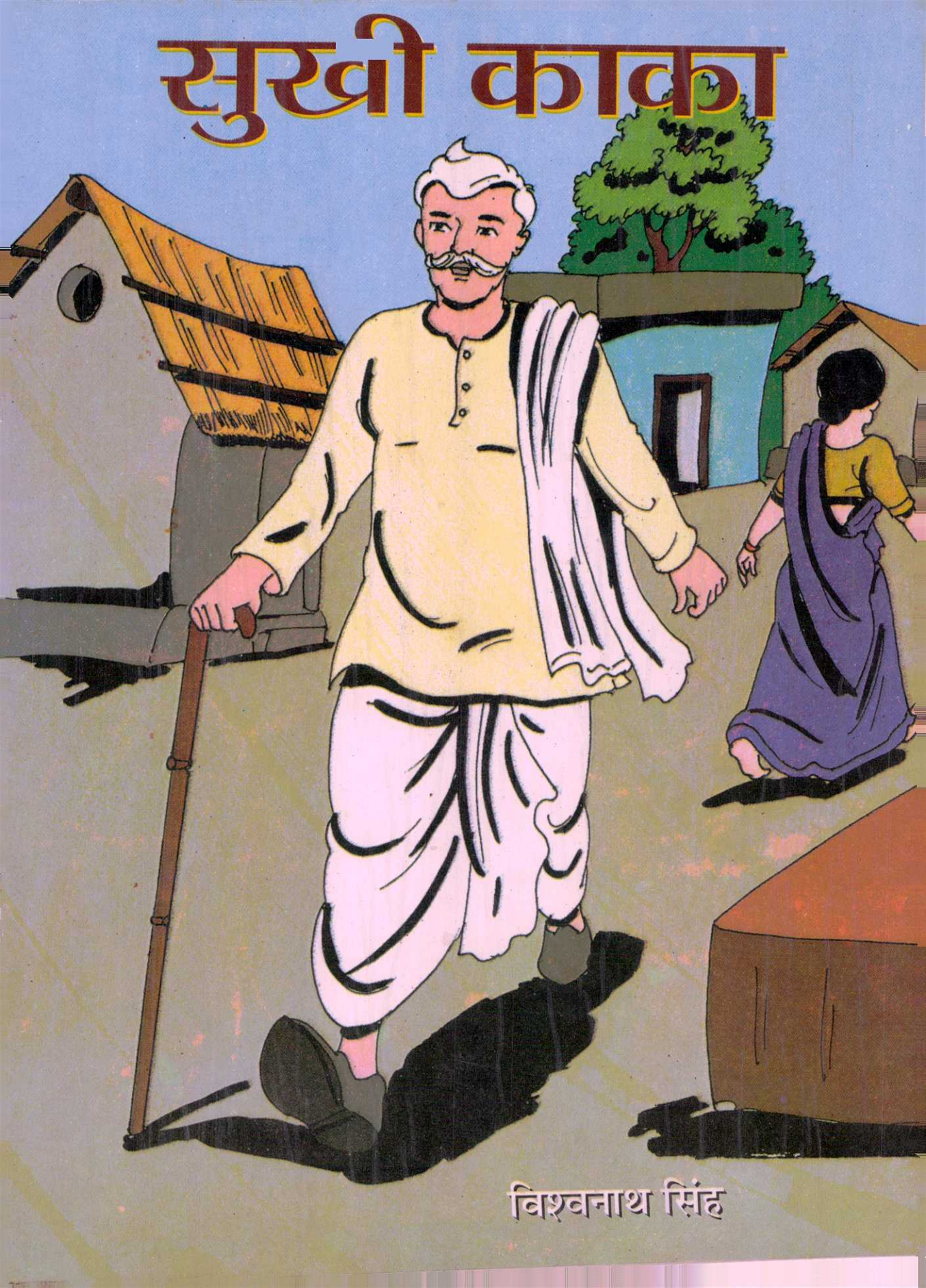

विश्वनाथ सिंह

सुखी काका

(सामाजिक और नैतिक मूल्यों पर आधारित नाटक)

विश्वनाथ सिंह

(Estd : 1939)
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली™
ISO 9001:2000 प्रकाशक

प्रकाशक • **प्रभात प्रकाशन**TM
4/19 आसफ अली रोड
नई दिल्ली-110002
तत्त्वावधान • भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
सर्वाधिकार • सुरक्षित
संस्करण • प्रथम, 2008
मूल्य • पच्चीस रुपए
मुद्रक • नरुला प्रिंटर्स, दिल्ली

SUKHI KAKA *by* Vishvanath Singh Rs. 25.00
Published by Prabhat Prakashan, 4/19 Asaf Ali Road, New Delhi-2 (INDIA)
ISBN 978-81-7315-613-7

दृश्य-पहला

[गाँव की एक गली। कुछ लोग आ-जा रहे हैं। लाठी टेकते, धीरे-धीरे चलते सुखी काका का प्रवेश। वह एक गाना गुनगुनाते आते हैं।]

सुखी काका : अपना सुख औरों को दे दे, औरों का दुःख ले ले।
सुख-दुःख का बँटवारा करके, इस दुनिया में जी ले।
रे बंदे, इस दुनिया में जी ले॥
(गोपाल का प्रवेश। गाना गाते आता है।)

गोपाल : जितना है, आपस में मिलकर खा ले, पी ले, खेले।
सुख-दुःख का बँटवारा करके, इस दुनिया में जी ले।
रे बंदे, इस दुनिया में जी ले॥

सुखी काका : अरे वाह बेटा, गोपाल, तू ने गाना याद कर लिया!

गोपाल : हाँ सुखी काका, गाना याद कर लिया, खाना-पीना याद कर लिया। आपने जैसा बताया था, वैसा जीना याद कर लिया।

सुखी काका : शाबाश! अच्छा बता, सवेरे से क्या-क्या किया। तेरे किस काम ने किसको कितना सुख दिया?

गोपाल : तो बताऊँ काका! सवेरे बिना जगाए जागा! माता-पिता के पैर छुए, फिर दिशा-मैदान को भागा। वहाँ से लौटकर आया। पहले

नहाया। फिर अपनी छोटी बहिन को जगाया। उसे नहलाया-धुलाया। पहले उसे खिलाया, तब खाया। थोड़ी देर पढ़ा-पढ़ाया। तब इधर आया। लेकिन···!

सुखी काका : लेकिन क्या बेटा!

गोपाल : मेरे इन कामों से माता-पिता ने सुख पाया! बहिन ने सुख पाया। मैंने सुख पाया! और आपको गाना सुनाया तो आपने भी सुख पाया। लेकिन काका···

सुखी काका : क्या बेटा···

गोपाल : एक ऐसी बात देखी, जिसे देखकर दुःख से मेरा जी भर आया!

सुखी काका : अरे··· वह कौन सी बात है बेटा!

गोपाल : अपने इसी गाँव में एक धनपत है। उसके पास खूब-धन संपत्ति है। धनपत का बूढ़ा बाप बीमार है। चलने-फिरने में लाचार है। धनपत ने बूढ़े बाप को घर से निकाल दिया है। उसे टूटी चारपाई पर डाल दिया है।

सुखी काका : हाँ·· यह तो मैंने भी सुना है।

गोपाल : तो फिर और सुना काका! धनपत का एक ही है लड़का। वह मेरे साथ है पढ़ता। लड़के का नाम है प्रेमू। प्रेमू अपने बाबा से प्यार करता है। मगर माँ-बाप से डरता है। माँ-बाप जब बाबा को कुछ कहते हैं, तब प्रेमू की आँखों से हमेशा आँसू बहते हैं।

सुखी काका : तब तो वह बहुत अच्छा लड़का है। जो औरों के दुःख में रोता है, वह बहुत अच्छा होता है।

गोपाल : हाँ काका, आज जब मैं आपके पास आ रहा था, तब प्रेमू अपने बाबा को दिशा-मैदान के लिए ले जा रहा था। बाबा चल नहीं

पा रहा था। प्रेमू उसे जल्दी-जल्दी लिये जा रहा था।

सुखी काका : अरे, ऐसा तो नहीं करना चाहिए। जो चल न पाए, उसे सहारा देकर धीरे-धीरे ले जाना चाहिए।

गोपाल : हाँ···मैंने भी प्रेमू से यही कहा। तो जानते हैं काका, प्रेमू ने क्या कहा—अम्मा मुझे डाँटेगी। बाबा को भी डाँटेगी। कहेगी—कमाई न धमाई, इतनी देर लगाई। बाबा देर से जाए, तो डाँटे। जल्दी जाए, तो डाँटे। कुछ खाए-पिए, तो डाँटे, न खाए, तो डाँटे। खाँसे, खखारे, हँसे-रोए कुछ भी करे, उसे डाँट पड़ती है।

सुखी काका : और वह डाँट प्रेमू के मन में गड़ती है। उसी से तुझे भी दुःख हुआ। होना ही चाहिए बेटा! दुःखी को देखकर दुःख, और सुखी को देकर सुख—यही होना चाहिए।

गोपाल : तो फिर काका, प्रेमू और उसके बाबा को कैसे सुखी किया जा सकता है। मैंने तो प्रेमू से कहा था—तू मेरे सुखी काका के पास आ जा। वह तुझे ऐसी दवा बताएँगे, तेरे सारे दुःख-दर्द भाग जाएँगे।

सुखी काका : (हँसते हुए) बेटा, मनुष्य के दुःख-दर्द अपने सोच-विचार के होते हैं। उनकी दवा भी अपने आपमें होती है। जिस दिन प्रेमू के माता-पिता यह सोच लेंगे कि जो दुःख-दर्द हम अपने बाप को दे रहे हैं; वही एक दिन हमें भी मिलेगा, तो···

गोपाल : लेकिन उसको कैसे मिलेगा। प्रेमू तो बहुत अच्छा लड़का है। वह अपने माँ-बाप को दुःख नहीं देगा।

सुखी काका : हाँ, वह तो नहीं देगा! लेकिन अपने बाबा को दुःख से

छुड़ाएगा तो!

गोपाल : हाँ काका, वह बहुत अच्छा लड़का है। आप जितनी बातें हमें सिखाते हैं, हम वे सारी बातें अपने साथियों को बताते हैं। एक प्रेमू ही तो है, जो उन बातों पर अमल करता है।

सुखी काका : अच्छा तो बेटा, कल उसके घर चलेंगे। आज तुझे मैं कुछ बातें बताता हूँ। तू जाकर प्रेमू को बता दे। चुपचाप बताना, कोई और न सुने! तू जरा मेरे पास आ! तेरे कान में बताता हूँ।

(काका गोपाल के कान में कुछ कहते हैं।)

गोपाल : (खुशी से उछलते हुए) अरे वाह काका।
वाह काका, वाह काका, तुम हमारे सुखी काका,
खुद तो रहते सुखी, करते दूसरों को सुखी काका।
भरी है मन में तुम्हारे, खुशी की और सुख की दौलत,
बाँटते हो तुम हमेशा सभी को बस वही काका॥
वाह काका, वाह काका,
तुम हमारे सुखी काका।

सुखी काका : अरे बेटा, इस दुनिया में सोचो तो बस सुख ही सुख है। और अगर ठीक से न सोचो, तो बस दुःख ही दुःख है। श्रवण कुमार की कहानी एक दिन तुम्हें सुनाई थी न! अपने अंधे माता-पिता को अपने कंधों पर लादकर उसने सारे तीर्थ कराए थे। कितना कष्ट उठाया होगा उसने! जंगल और पहाड़ों का रास्ता, हिंसक जीव-जंतु और रात-दिन का चलना! लेकिन अपने माता-पिता की सेवा में उसे सुख मिला था। और एक तुम्हारे प्रेमू के माता-पिता हैं, जिनको अपने पिता की सेवा करने में दुःख होता है।

खुद दुःखी होते हैं और अपने पिता और पुत्र को भी दुःख देते हैं।

गोपाल : लेकिन अब तो वह दुःख नहीं देंगे काका! जो आपने बताया, मैं अभी जाकर प्रेमू को बताता हूँ। उनकी सोच बदलेगी, तो व्यवहार भी बदलेगा। यही तो बताया है आपने! और हाँ काका, अभी तो प्रेमू शायद अपने बाबा के साथ रास्ते में ही मिल जाए! प्रेमू को आपकी बताई बातें बताता हूँ।

सुखी काका : लेकिन जाते-जाते वही गाते हुए जा बेटा! इस दुनिया में···

गोपाल : हाँ काका, याद आया।

इस दुनिया में सुख ही सुख है,
इस दुनिया में दुःख ही दुःख है।
सुख से दुःख, दुःख से सुख लेकर
जैसा चाहे जी ले रे बंदे। इस दुनिया में···
सुख-दुःख का बँटवारा करके
इस दुनिया में जी ले रे बंदे। इस दुनिया में···

सुखी काका : अरे वाह! तुझे तो सब कुछ बहुत अच्छी तरह याद है। तू प्रेमू को समझाने जा रहा है न! तो उसे यह भी समझा देना कि तेरा दुःख, बस रात भर का दुःख है। हर दुःख, बस रात भर का होता है। इसके बाद···

गोपाल : हाँ काका, याद आया—इसके बात सूरज निकलता है।

सुख का सूरज सुबह निकलता,
और साँझ को ढलता है!
अँधियारा बस थोड़ा सा, फिर

सूरज सुबह चमकता है।
रात का सोना, दिन का जगना
हँस-हँसकर तू जी ले रे बंदे। इस दुनिया में···
(गाते-गाते एक ओर से जाता है। मंच के दूसरी ओर सुखी दादा जाते हैं।)

दृश्य-दूसरा

[गाँव के बाहर की एक पगडंडी। प्रेमू अपने बाबा को दिशा-मैदान के बाद घर वापस लिये जा रहा है। प्रेमू बाबा की लाठी पकड़े आगे-आगे है। बाबा उसके पीछे।]

बाबा : जल्दी-जल्दी चल बेटा, नहीं तो आज भी···

प्रेमू : आज भी मार पड़ेगी, यही तो कहना चाह रहे हो बाबा! लेकिन अब मैं जल्दी नहीं चलूँगा। एक बार तो गिर चुके हो। तुम्हारे पैर में चोट लगी है। जल्दी कैसे चल पाओगे!

बाबा : पैर की चोट की कोई बात नहीं बेटा! जो चोट दिल में लगती है, वह ज्यादा दुःख देती है।

प्रेमू : बाबा, मेरा एक साथी है गोपाल। गोपाल के एक काका हैं सुखी काका! आज मैं उनके पास जाऊँगा··· अरे बाप रे बाबा, काँटा गड़ गया। बाबा, अब क्या करूँ! (गोपाल बैठ जाता है।)

बाबा : तुझसे कितनी बार कहा—जूता पहन लिया कर! लेकिन तू नहीं मानता!

प्रेमू : मैं तो तब तक जूता नहीं पहनूँगा, जब तक आप जूता नहीं पहनेंगे।

(गोपाल का प्रवेश)

गोपाल : और तेरे बाबा तब तक जूता नहीं पहनेंगे, जब तक तेरे पिता तेरे बाबा के लिए जूता लाएँगे नहीं! बात सही या नहीं।

बाबा : नहीं-नहीं बेटा गोपाल, जूता तो मेरे पास हैं, लेकिन···

प्रेमू : लेकिन मेरे पिता बाबा को जूता नहीं देते। इसलिए नहीं पहनने देते कि जूते फट जाएँगे। देख रहे हो बाबा! यह फटी धोती और यह कुरता!

बाबा : मेरा क्या है बेटा! थोड़े दिन की जिंदगी चल जाएगी, जैसी चली। लेकिन इस प्रेमू को तो समझा दे। खुद जूता नहीं पहनता! आज काँटा गड़ गया।

गोपाल : (काँटा निकालते हुए) अरे, सचमुच कितना बड़ा काँटा है। प्रेमू तू धन्य है, जो अपने बाबा के लिए खुद कष्ट सह रहा है। लेकिन आज मैं तुझे यही बताने आया हूँ कि कल से तेरे पैर में कोई काँटा नहीं गड़ेगा! और न तेरे बाबा को कोई दुःख सहना पड़ेगा।

प्रेमू : सच गोपाल भैया! मैं तुम्हारे पास ही आ रहा था।

गोपाल : अब तुम्हें मेरे पास आने की कोई जरूरत नहीं। मैं तुम्हारे पास आऊँगा! और कल आऊँगा। सुखी काका के साथ आऊँगा! तुझे बताया था न! सुखी काका जहाँ-जहाँ जाते हैं, सुख ही ले

जाते हैं। दूसरे का दु:ख अपनी झोली में डाल लेते हैं। और अपनी झोली का सुख दूसरे को बाँट देते हैं।

बाबा : हाँ बेटा, कल से यह प्रेमू उनका गीत गुनगुना रहा है—अपना सुख औरों को दे दे, औरों का दु:ख ले ले···।

गोपाल : सुख-दु:ख का बँटवारा करके अपना जीवन जी ले, रे बंदे··· यही न बाबा! सुखी काका ने प्रेमू को एक गुरुमंत्र दिया है! वही बताने मैं आया हूँ। वह गुरुमंत्र चल गया, तो कल से प्रेमू के माता-पिता अपने पिता के सेवक हो जाएँगे। प्रेमू के सारे दु:ख-दर्द दूर हो जाएँगे।

बाबा : क्या! क्या ऐसा होगा?

गोपाल : हाँ बाबा होगा। आप और प्रेमू थोड़ी देर बैठ जाइए। जरा ध्यान से मेरी बात सुनिए। जैसा सुखी काका ने बताया है, वैसा ही करना है। सुनो मेरी बात, कल देखना, बात की करामात! बस आप दोनों को थोड़ा सा नाटक करना पड़ेगा।

(गोपाल प्रेमू और प्रेमू के बाबा से बातें करता है।)

प्रेमू : गोपाल भैया! मैं करूँगा, ऐसा ही करूँगा, ऐसा ही करूँगा। सुखी काका ठीक कहते हैं—जो दूसरों को दु:ख देते हैं, वे स्वयं दु:खी रहते हैं। हमारे माता-पिता बाबा को दु:ख देकर खुद भी तो दु:ख पाते हैं!

गोपाल : अब देखना—कल से वे भी तो इस दु:ख से छूट जाएँगे। न बाबा दु:खी रहेंगे, न तू! और न तेरे माता-पिता।

प्रेमू : तो फिर गोपाल भैया, कल दोपहर तक जरूर आ जाना। मैं बाबा को लेकर घर जाता हूँ।

गोपाल : लेकिन सुखी काका की यह बात याद रखते हुए तुम अपने रास्ते जाओ और हम अपने रास्ते जाते हैं। गाओ हमारे साथ गाओ···।

सुख का सूरज सुबह निकलता और रात में ढलता है,
अँधियारा बस थोड़ा सा, फिर सूरज सुबह निकलता है।
रात का सोना, दिन का जगना हँस-हँसकर तू जी ले रे बंदे।
इस दुनिया में···

(गाना गाते प्रेमू और बाबा एक ओर से व गोपाल दूसरी ओर से जाते हैं।)

दृश्य-तीसरा

[प्रेमू का घर। घर के बाहर टूटी चारपाई पर प्रेमू का बाबा लेटा है। प्रेमू बाबा की चारपाई पर बैठा है। बाबा बड़ी जोर से खाँस रहा है। प्रेमू बाबा की पीठ सहला रहा है।]

प्रेमू : बाबा, और जोर से खाँसो, इतनी जोर से कि घर के भीतर तक सुनाई पड़े।

बाबा : वही तो कर रहा हूँ बेटा! वैसे तो रोज खाँसी आती थी, बड़ी जोर से आती थी। लेकिन जब चाहता हूँ कि खाँसी आए, तब नहीं आ रही···।

प्रेमू : और थोड़ा जोर लगाओ बाबा! (बाबा जोर से खाँसता है।)

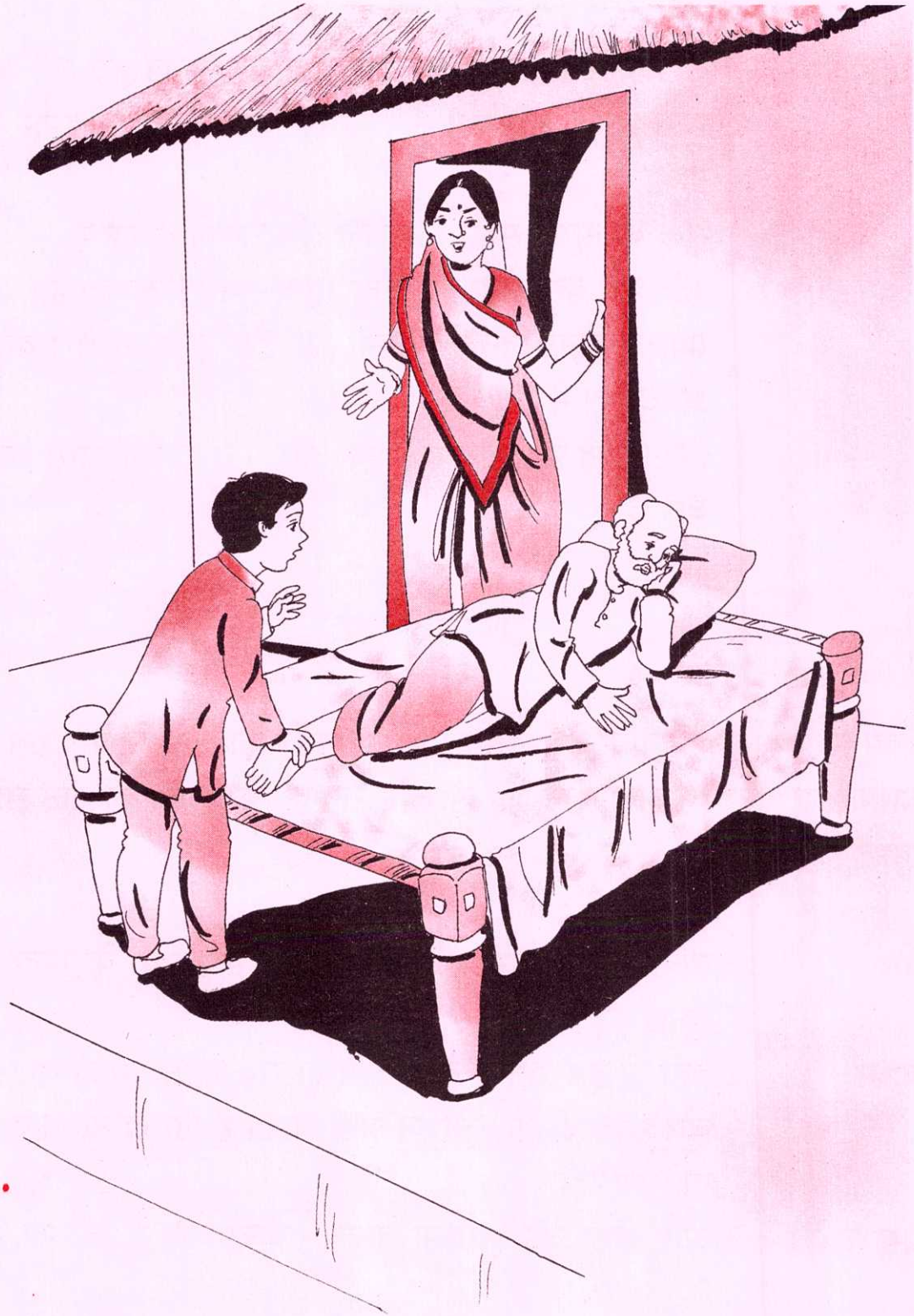

हाँ··· ऐसे ही, देखो, माँ निकलने ही वाली है।

(बाबा और जोर से खाँसता है। प्रेमू की माँ लक्ष्मी का प्रवेश।)

लक्ष्मी : अरे बुढ़ऊ··· कुछ तो शरम करो। दिन-रात बस खों, खों··· सुनते-सुनते मैं तो तंग आ गई। सास-ससुर तो सबके घर में होते हैं, पर ऐसे ससुर···।

प्रेमू : अम्मा, सास-ससुर तो माता-पिता के समान होते हैं!

लक्ष्मी : हाँ होते हैं, तू बड़ा ज्ञानी पंडित है न! ऐसे बोल रहा है, जैसे मैं कुछ जानती ही नहीं।

प्रेमू : आप तो सब कुछ जानती हैं। बाबा अभी यही कह रहे थे! सवेरे से खाँसी तो आ रही है। आज तो पेट में दर्द भी है! अभी कह रहे थे—तेरी अम्मा सब कुछ जानती है, जा दवा ले आ।

लक्ष्मी : हाँ, ले आ। कभी खाँसी, कभी बुखार, कभी पेट दर्द, कभी सिर दर्द, हर मर्ज की दवा मैं ही तो हूँ। सारी दवा दे के देख लिया! बस एक जहर बाकी है।

(धनपत का प्रवेश)

धनपत : अरे भागवान! किसको जहर दे रही हो।

लक्ष्मी : अपने को दे रही हूँ, और किसको दूँगी। यह बूढ़ा न तो मरेगा, न माचा छोड़ेगा। आज सवेरे से इतनी जोर-जोर से खाँस रहा है, जैसे कहीं हथौड़े चल रहे हैं। ऊपर से कह रहा है—मेरे पेट में दर्द है!

धनपत : मैं सब जानता हूँ! इसे अभी खाना तो नहीं दिया! नहीं दिया, तो बिलकुल न देना। पड़े-पड़े खाता है। बहाने बनाता है। बूढ़े तो हर घर में होते हैं; लेकिन ऐसे बूढ़े···!

प्रेमू : ऐसे बूढ़ों को कैसे रखना चाहिए पिताजी!

धनपत : ऐसे जैसे मुरदे को चिता पर रखते हैं! नालायक कहीं का! तुझे बहुत चिंता रहती है इस मुरदे की!

लक्ष्मी : अरे, इसकी न कहो, अभी मुझसे कह रहा था—सास-ससुर तो पिता के समान होते हैं! और सवेरे···।

धनपत : हाँ-हाँ बताओ, सवेरे क्या कह रहा था, छटाँक भर का लड़का, और बात कर रहा है पसेरी की!

लक्ष्मी : अरे, छह पसेरी नहीं! कह रहा था—कल बाबा गड्ढे में गिर गए थे। इनको चोट लग गई थी। इनका कुरता फटा है, धोती फटी है। लाठी नई लाओ, जूता मँगाओ। जब तक बाबा को जूता नहीं आएँगे मैं भी जूता नहीं पहनूँगा।

धनपत : तो न पहने। इस बूढ़े ने सिखाया होगा। तो चलो, आज हम इस बूढ़े को सिखाते हैं। लक्ष्मी, बताओ हमारी शादी के कितने साल हुए।

लक्ष्मी : यही करीब 15 साल।

धनपत : बस 15 साल पहले मैंने अपने इस बाप को धोती और कुरता लाकर दिया था। इसने इतनी जल्दी सब फाड़ दिया।

लक्ष्मी : और जब मैं ब्याहकर इस घर में आई थी, तब इसके जूते बिलकुल नए जैसे थे, और लाठी···

प्रेमू : हाँ वह भी नई रही होगी, लेकिन···

धनपत : अरे चुप, मैं तेरे लिए तो सब कुछ लाता हूँ—नए जूते, नई कमीज, कुरता, पैजामा, पैंट-शर्ट! जो चाहे सो पहन!

प्रेमू : मैं कुछ नहीं पहनूँगा, जब तक बाबा···

धनपत : अच्छा तो इस बुड्ढे ने तुझे सिखा-पढ़ाकर इतना पक्का कर दिया है। आज मैं इसे पक्का करूँगा। (लक्ष्मी से) लक्ष्मी जा तो, इस बूढ़े का सारा सामान निकालकर ला—कुरता, धोती, लाठी, जूता, लोटा था··· अरे नहीं, नहीं, लोटा-थाली इसे नहीं देना, वही खपरा और मिट्टी का सकोरा ले आ, जिसमें यह खाना खाता है।

लक्ष्मी : यह सब सामान तो यहीं है, इसी के पास। लो उठाओ, जो करना हो, सो करो!

धनपत : तो लो (बाबा के कुरते को उठाकर फाड़ते हुए) यह फटा हुआ कुरता मैं बिलकुल फाड़ देता हूँ। आज के बाद यह बूढ़ा नंगा रहेगा।

बाबा : अरे··· यह क्या करते हो बेटा!

प्रेमू : अरे यह न करो बापू। (रोने लगता है)

धनपत : अरे··· तू क्यों रोता है, रोना है तो यह बूढ़ा रोए। (धोती को उठाकर फाड़ते हुए) और यह ले धोती। और यह ले लाठी (तोड़ते हुए) और यह ले जूता··· (फेंकते हुए) और यह खप्पर··· इसमें यह खाना···खाना खाता था, देखता हूँ आज के बाद किसमें खाएगा। (खप्पर तोड़ता है।)

प्रेमू : (जोर से चिल्लाते हुए) नहीं, नहीं, नहीं बापू··· (बेहोश होकर गिर जाता है।)

बाबा : अरे मेरे प्रेमू को क्या हो गया (पास जाकर उठाते हुए) अरे··· यह तो बेहोश हो गया! हे भगवान्!

धनपत : प्रेमू बेहोश हो गया। (प्रेमू के पास आता है।)

लक्ष्मी : प्रेमू बेहोश हो गया। (प्रेमू के पास आती है।)

(गाना गाते हुए गोपाल और सुखी काका का प्रवेश।)

जैसे करनी, वैसी भरनी, वैतरणी है पार उतरनी,
पाप-पुण्य से भरी है नैया, समझ-बूझकर खेल रे बंदे।
इस दुनिया में जी ले।

बाबा : अरे सुखी का आ गए! (काका और गोपाल के पास आकर) काका प्रेमू को बचा लीजिए, देखो इसे क्या हो गया।

सुखी काका : प्रेमू को कुछ नहीं हो सकता। वह तो बहुत अच्छा लड़का है। हमारे गोपाल का दोस्त है। चलो गोपाल देखें। (दोनों प्रेमू के पास जाते हैं।) अरे, यह तो बेहोश है। गोपाल जरा पानी तो ला!

(गोपाल पानी लाता है। काका प्रेमू के मुँह पर पानी का छींटा मारते हैं। प्रेमू उठ बैठता है।)

प्रेमू : अरे मेरा सब कुछ चौपट हो गया। (रोने लगता है।) मैंने जो सोचा था···।

धनपत : (घबराकर) क्या चौपट हो गया बेटा! तूने क्या सोचा था!

प्रेमू : आपने वह धोती फाड़ दी, कुरता भी फाड़ दिया। लाठी तोड़ दी, जूता भी फेंक दिया··· (रोते हुए) और··· और वह खप्पर भी तोड़ दिया! अब मैं क्या करूँगा।

धनपत : तुझे इन सबका क्या करना था बेटा, तू क्यों रोता है। रो-रोकर बेहोश होता है।

प्रेमू : अरे, मुझे इन्हीं से तो आपकी सेवा करनी थी। जब आप बूढ़े होंगे, तब मैं आपको क्या पहनाऊँगा! कुरता-धोती आपने फाड़

दी। किसमें रोटी खिलाऊँगा! मिट्टी का खप्पर आपने फोड़ दिया। जो जूते आपको पहनाने थे, वही आपने फेंक दिए। जो लाठी आपको सहारा देती, उसी को आपने तोड़ दिया। अब मैं आपकी सेवा कैसे करूँगा!

धनपत : अरे··· तू यह क्या कह रहा है बेटा!

सुखी काका : मैं समझ गया धनपत! यह तुम्हारा लड़का बहुत समझदार है। इसने कल मुझसे पूछा था कि मुझे माँ-बाप की सेवा किस प्रकार करनी चाहिए। मैंने कह दिया था—जिस प्रकार तुम्हारे माँ-बाप अपने माँ-बाप की सेवा करते हैं। अब तुम बताओ धनपत, क्या तुम अपने बाप की ऐसी ही सेवा करते हो, जिसे देखकर यह तुम्हारा लड़का प्रेमू बेहोश हो गया।

गोपाल : हाँ काका, प्रेमू ने तो यह सोचा कि जिन चीजों से मुझे अपने बाप की सेवा करनी थी, वे चीजें मेरे बाप ने ही तोड़-फोड़ दीं। इसी दु:ख से वह बेहोश हो गया।

सुखी काका : लेकिन सच बताओ धनपत, क्या तुम अपने बेटे की इसी तरह की और ऐसी ही सेवा से सुखी होते, जैसी तुमने अपने बाप की सेवा की।

धनपत : (सिर नीचा किए हुए) मुझसे गलती हुई काका।

सुखी काका : तब फिर सुखी काका की एक बात मानो। आज से जैसा प्रेमू कहेगा, उस प्रकार तुम अपने बाप की सेवा करोगे। और प्रेमू वही कहेगा, जो गोपाल और मैं कहेंगे। और हम सब मिलकर जो कहेंगे, उसी में सबका सुख है—हमारा, तुम्हारा और सबका!

गोपाल : तो फिर कहो काका, जो हम सबसे कहलाना चाहते हो।

सुखी काका : हाँ कहो!

कोई रोता धन धरती को, कोई माल खजाने को,
सब रोते हैं जितना पाया, उससे ज्यादा पाने को।
तूने जितना पाया, मिलकर उसको खा ले, पी ले रे बंदे!
इस दुनिया में जी ले।

प्रेमू : (बाबा के साथ) अपना सुख औरों को दे दे, औरों का दु:ख ले ले।

सुख-दु:ख का बँटवारा करके, इस दुनिया में जी ले।
रे बंदे इस दुनिया में...

गोपाल : और हाँ, काका! इस दुनिया में भगवान् ने सबको सब कुछ दिया है। सबके साथ मिल-बाँटकर इसका सुख लेना चाहिए।

सुखी काका : हाँ बेटा, सब मिलकर बोलो!

मुफ्त की धरती पाई सबने, मुफ्त का जल अनमोल पवन,
बिन पैसे का सूरज चमके, बिन पैसे का मिला गगन।
साझे का अमृत पाया है, सोच-समझकर पी ले रे बंदे।
इन दुनिया में जी ले।
अपना सुख औरों को दे दे, औरों का दु:ख ले ले,
सुख-दु:ख का बँटवारा करके दुनिया में तू जी ले, रे बंदे।
दुनिया में जी ले॥

(गाते-गाते सभी का प्रस्थान)

□□□

आमुख

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, नई दिल्ली ने नवसाक्षरों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों और अपेक्षाओं के अनुरूप साक्षरता-साहित्य के निर्माण में नवाचार की पहल की है। हिंदीभाषी क्षेत्रों के नवसाक्षरों की पहचान की रोशनी में प्रौढ़ साक्षरता में लेखनरत साहित्यकारों, समाजार्थिक-चिंतकों, प्रौढ़ शिक्षा विशेषज्ञों तथा सतत शिक्षा केंद्रों के अनुभवी आयोजकों ने 23-24 अगस्त, 2007 की अवधि में भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ में आयोजित विचार गोष्ठी में नवसाक्षरों के लिए उपयोगी साहित्य-लेखन पर गहन विचार-विमर्श किया।

साक्षरता-सामग्री के पाठ्य विवरण पर संगोष्ठी में सम्मिलित विषय विशेषज्ञों में सहमति हुई। साक्षरता सामग्री के तीन प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किए गए। पहला उद्देश्य, जो नवसाक्षरों की साक्षरता को सजीव बनाने और आगे बढ़ाने में सहायक हो; दूसरा उद्देश्य, जो जन-कल्याण और सामूहिक कार्य-संस्कृति को बढ़ावा देनेवाला हो, ताकि सब लोग मिल-जुलकर रहते हुए विकास की ओर बढ़ें। तीसरा उद्देश्य, जो अपने अधिकारों और कर्तव्यों को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक हित के लिए उन्हें प्रेरणा दे सके, जिससे उनका कल्याण, समाज का हित और राष्ट्र का विकास होता रहे।

इस प्रौढ़ साक्षरता साहित्य कार्यशाला में श्री विश्वनाथ सिंह द्वारा लिखित पुस्तक '**सुखी काका**' नवसाक्षरों को जागरूक पाठक बनाने और विकास के क्षेत्र में उन्हें आगे बढ़ाने के अवसर प्रदान करेगी। इसका संप्रेषण और भाषा स्तर भी प्रौढ़ नवसाक्षरों में जाँच लिया गया है। इस पुस्तक का विधिवत् क्षेत्र-परीक्षण करा लिया गया है। इस पुस्तक में नवसाक्षरों के सामाजिक सरोकारों को प्राथमिकता दी गई है। हमारा विश्वास है कि यह पुस्तक निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में अवश्य सफल होगी।

इसे प्रकाशित करने में और इसे नवसाक्षरों तक पहुँचाने में प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली ने जो सहयोग प्रदान किया है, हम उसके लिए हृदय से आभारी हैं। प्रसन्नता की बात यह है कि प्रभात प्रकाशन ने इस शृंखला की सभी पुस्तकों के प्रकाशन एवं वितरण का दायित्व स्वीकार किया है। इस पुस्तक के पाठकों से हमें जो सुझाव प्राप्त होंगे, हम उनका स्वागत करेंगे।

17-बी, इंद्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002

—डॉ. मदन सिंह
महासचिव, भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली™
ISO 9001 : 2000 प्रकाशक